IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

जागरण सुधार काल में स्त्री लेखन

पूनम प्रसाद, शोधार्थी

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

महावीर प्रसाद द्विवेदी के दौर में भारत की दुर्दशा चरम पर थी। भारत उस समय बाह्य और भीतरी गुलामी से घिरा था। बाह्य गुलामी थी औपनिवेशिक शासन यानी अंग्रेजों की और भीतरी थी परम्परा, जातीयता और वर्गीय गुलामी की। जब समाज में इस तरह की कुरीतियाँ हो तो समाज की स्त्रियों के साथ न्याय कैसे हो सकता था। गुलामी की यह मानसिकता स्त्रियों के सन्दर्भ में भी रही। सदियों से स्त्रियों को माता व पत्नी के कर्तव्यों में जकड़ कर रखा गया। उनकी अभिव्यक्ति को आवाज़ देने वाला कोई न था और न उनमें खुद अपनी स्थिति को समझने की चेतना थी।

इस युग में पुरुष लेखकों की प्रतिभाएं तो बहुत उभर के सामने आती है किन्तु स्त्री लेखिकाओं पर प्रकाश न के बराबर ही पड़ा। जबकि यह युग हिंदी जगत में आधुनिक काल के नाम से जाना जाता है। हर तरफ जागृति का दौर किन्तु नारी जागृति उस तरह से दिखाई नहीं देती। इसका एक बड़ा कारण यह हो सकता है कि सदियों से चली आ रही पितृसत्तात्मक सोच ने **'her history'** को केंद्र में न रख कर **'his history'** को ही वरीयता दी। किन्तु इसका ये मतलब नहीं कि स्त्रियों ने लिखा नहीं। वह बहुत पहले से अपनी अभिव्यक्ति को संजोती आ रही हैं। बंद कमरा रौशनी की किरण को अंदर आने से न रोक सका। नारी जागरण की शुरुआत हुई और इसी युग से मानी जा सकती है क्योंकि स्वाधीनता की लड़ाई में स्त्रियों ने न सिर्फ अपनी भूमिका निभाई बल्कि अपनी स्थिति को सुधारते हुए लेखनी की तरफ रुख किया।

इस युग के साहित्य-सृजन का प्रेरक तत्त्व राष्ट्रीय-सांस्कृतिक जागरण ही था। इस युग से पूर्व भारतेंदु युग में इस जागरण ने साहित्यकारों को नए पथ पर मोड़ दिया तथा साहित्य और समाज के अंतराल को भी कम किया। आलोच्य युग में यह जागरण प्रत्येक साहित्य विधा का अंतरवर्ती प्रवाह बन गया। निबंध हो या आलोचना, कहानी हो या उपन्यास, उसके कलात्मक परिधान को हटा देने पर भीतर राष्ट्रीय-सांस्कृतिक जागरण की चेतना अवश्य लक्षित होती है। इस

जागरण ने साहित्य के मूल्यों में परिवर्तन किया। शास्त्रीय रूढ़ियाँ टूटी, साहित्य का उद्देश्य व्यापक जन समुदाय को प्रभावित करना और उसे आदर्श जीवन की ओर मोड़ना बन गया।[1]

ऐसे में स्त्री जागरण की बात की जाए तो लोग समझने लगे थे कि स्त्रियों को शिक्षित करने की आवश्यकता है। 'महिला मोद' पुस्तक महावीर प्रसाद द्विवेदी की महिला उपयोगी पुस्तक है। 'स्त्री शिक्षा के विरोधी कुतर्को का खंडन' यह लेख पहली बार सितम्बर 1914 की सरस्वती में 'पढ़े लिखों का पांडित्य' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। बाद में द्विवेदी जी ने इसे 'महिला मोद' पुस्तक में शामिल करते समय इसका शीर्षक 'स्त्री लेखन के विरोधी कुतर्को का खंडन' रख दिया था।

आज हमारे समाज में लडकियाँ शिक्षा पाने एवं कार्यक्षेत्र में क्षमता दर्शाने में लड़कों से बिल्कुल भी पीछे नहीं हैं किन्तु यहाँ तक पहुँचने के लिए स्त्रियों ने लंबा संघर्ष किया। तत्कालीना समाज में भी नवजागरण काल के चिंतकों ने स्त्री-शिक्षा ही नहीं बल्कि समाज में जनतांत्रिक एवं वैज्ञानिक चेतना के सम्पूर्ण विकास के लिए अलख जगाया। द्विवेदी जी का यह लेख उन सभी पुरातनपंथी विचारों से लोहा लेता है जो स्त्री-शिक्षा को व्यर्थ अथवा समाज के विघटन का कारण मानते थे। इस लेख की दूसरी विशेषता यह है कि इसमें परंपरा को ज्यों का त्यों नहीं स्वीकारा गया है, बल्कि विवेक से फैसला लेकर ग्रहण करने योग्य बात की गई है और परंपरा का जो हिस्सा सड़-गल चूका है, उसे रूढ़ि मानकर छोड़ देने की। यह विवेकपूर्ण दृष्टि सम्पूर्ण नवजागरण काल की विशेषता है। आज इस निबंध का अनेक दृष्टियों से ऐतिहासिक महत्व है। इस निबंध का एक अंश देखिए-

"शिक्षा बहुत व्यापक शब्द है। उसमें सीखने योग्य अनेक विषयों का समावेश हो सकता है। पढ़ना-लिखना भी उसी के अंतर्गत है। इस देश की वर्त्तमान शिक्षा-प्रणाली अच्छी नहीं। इस कारण यदि कोई स्त्रियों का पढ़ना अनर्थकारी समझे तो उसे उस प्रणाली का संशोधन करना या कराना चाहिए, खुद पढ़ने-लिखने को दोष न देना चाहिए। लड़कों ही की शिक्षा-प्रणाली कौन-सी बड़ी अच्छी है। प्रणाली बुरी होने के कारण क्या किसी ने यह राय दी है कि सारे स्कूल और कॉलेज बंद कर दिए जाएँ ? आप खुशी से लड़कियों और स्त्रियों की शिक्षा की प्रणाली का संशोधना कीजिए। उन्हें क्या पढ़ना चाहिए, कितना पढ़ाना चाहिए, किस तरह की शिक्षा देना चाहिए और कहाँ पर देना चाहिए-घर में या स्कूल में- इन सब बातों पर बहस कीजिए, विचार कीजिए, जी में आवे सो कीजिए, पर परमेश्वर के लिए यह न कहिए कि स्वयं पढ़ने-लिखने में कोई दोष है- वह अनर्थकार है, वह अभिमान का उत्पादक है, वह गृह-सुख का नाश करने वाला है। ऐसा कहना सोलहों आने मिथ्या है।"[2]

'बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध को इस बात का श्रेय जाता है कि इनमें स्त्री की स्थिति पर लगातार विचार हुआ। इसकी पहल उन्नीसवीं शताब्दी के समाज सुधारकों ने कर दी थी। अंग्रेजो की शिक्षा नीति के चलते जो नया वर्ग उभरा

[1] संपादक डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 501
[2] सरस्वती पत्रिका, संपादक महावीर प्रसाद द्विवेदी, स्त्री शिक्षा के विरोधी कृतार्कों का खंडन, सितम्बर 1914

वह देश की गुलामी मिटाने में लग गया। उस समय-राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, महादेव गोविंद रानाडे, महर्षि कर्वे, ज्योतिबा फुले,सावित्रीबाई फुले, रमाबाई रानाडे, आनंदीबाई जोशी, ऐनी जगन्नाथन और रुक्माबाई आदि प्रमुख स्त्री सुधारक रहे जिन्होंने महिला शिक्षा का स्पष्ट समर्थन किया और महिला पक्षधरता के लिए सकारात्मक धरातल तैयार किया।'[3]

लोग स्त्री चेत्तना की इस लहर में शामिल हुए और यह चेतना भारत में सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक स्तरों पर ही सीमित नही थी बल्कि साहित्य में भी इसकी आवाज़ दर्ज होने लगी। भारतेंदु अपनी पत्रिका 'बालाबोधिनी' (1874)में स्त्री चेतना को बढ़ाने का काम करते हैं। हिंदी साहित्य में पुरुष लेखकों ने अपने साहित्य में स्त्री के बारे में लिखा है। सर्वप्रथम 1870 में पंडित गौरीदत्त का उपन्यास 'देवरानी-जेठानी' की कहानी सामने आता है। 1872 में इश्वरी प्रसाद, कल्याण राय की 'वामा शिक्षक' और 1877 में श्रद्धाराम फुल्लौरी की 'भाग्यवती' स्त्री शिक्षा से सम्बंधित पुस्तक है। इन सब शुरूआती साहित्य में स्त्री के अधिकार कम, कर्तव्य ज्यादा बताए जाते थे। इन आचरण पुस्तकों का उद्देश्य स्त्रियों को आदर्श रूप में दिखाना, अच्छी बुरी स्त्री का फर्क बताना ही था जो कि पित्रसतात्मक दिमाग से सोचा जाता था।

नवजागरण के दौर में जागृती तो हुई किन्तु स्त्री चेतना के प्रति समाज सोया रहा। समाज में सुधार के बजाय स्त्रियों को सुधारने की बात कही जाती। इन पुस्तकों में स्त्री के अधिकारों की बजाय उसे आदर्शों में कैद किया गया है। उसे एक आदर्श माँ, पत्नी, बेटी आदि के रूप में दिखाया गया है।

"भारत में स्त्री चेतना का आन्दोलन तीन रूपों में सामने आता है। पहला इतिहास और पुराण के सन्दर्भ में दूसरा यूरोप में स्त्री आन्दोलन के रूप में तीसरा भारत में राष्ट्रीय आन्दोलन के रूप में जिसका जिक्र वीरभारत तलवार भी करते है और जिसे द्विवेदी के चिंतन व लेखन में भी देखा जा सकता है।"[4]

द्विवेदी युग में आकर स्वाधीनता आन्दोलन अधिक शक्तिशाली हो गया था। पूरी चेतना ब्रिटिश साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद शक्तियों को देश से बाहर खदेड़ देने के लिए संकल्प रूप में सामने आई। भारतीयता की तलाश में यह काव्य रामकृष्ण,शिवाजी आदि को अपनाकर एक नए रूप में प्रकट हुआ। नारी जागरण सम्बन्धी आंदोलनों की सीधी प्रतिध्वनी 'प्रियप्रवास', 'मिलन', 'यशोधरा', 'साकेत' जैसे काव्यों में सुनाई दी।

भारत के इतिहास में स्त्रियों को शिक्षा या लेखन के योग्य नही माना गया उनकी लेखनी को नाकारा जाता रहा ऐसा समझा गया कि इनकी लेखनी सुगठित नहीं है किन्तु यह साहित्येतिहास की भारी भूल रही। साहित्य के इतिहास में

[3] ममता कालिया (सम्पादक), बीसवीं सदी का हिंदी महिला-लेखना खंड-3, साहित्य अकादमी, प्रथम संस्करण-2015 पृष्ठ 9

[4] बहुवचन, महावीर प्रसाद द्विवेदी पर विशेष' : संपादक-अशोक मिश्र,महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्विद्यालय वर्धा : विषय- महावीर प्रसाद द्विवेदी का चिंतन और स्त्री: भावनमासीवाल, पृष्ठ 51 : अंक 45 , अप्रैल-जून 2015 ISSN- 2348-4586)

पुरुष लेखकों को ही केंद्र में रखा गया जबकि स्त्रियाँ उस दौर में भी लिख रहीं थीं और आज भी लगातार लिख रहीं हैं। उनका शिल्प अलग हो सकता है किन्तु विचार एक ही है-अपनी आवाज़ को बुलंद करना। इतिहास में उन्हें बड़ी चालाकी से दरकिनार कर दिया गया। वह सदियों से अँधेरे में रखीं गईं जिससे वह गुमशुदा ही हो गईं। जबकि "पश्चिमी स्त्रीवाद ने गुमशुदा स्त्रियों को बड़े पैमाने पर इतिहास में (साहित्येतिहास में भी) पुनस्थापित करने का उद्योग किया है लेकिन हमारे यहाँ अब तक कायदे से इस गुमशुदगी की शिनाख्त तक नहीं हुई है। अगर हम हिंदी साहित्येतिहास में स्त्री रचनाकारों को ढूढें तो क्या पाते हैं **?** क्या यह महज़ संयोग है कि 'शिवसिंह सरोज'**(**1878) में कवयित्री ताज और शेख का उल्लेख भी पुरुष के रूप में किया गया है और हिंदी के सर्वाधिक मान्य इतिहास-रामचंद्र शुक्ल के हिंदी साहित्य इतिहास (1929) में शेख का उल्लेख स्वतंत्र रूप से न करके कवि आलम के प्रसंग में ही किया गया है और 'महिला मृदुवाणी'**(**1904)के प्रकाशन के पच्चीस वर्ष के बाद लिखे जाने के बाद भी इस बहुप्रशंसित इतिहास-ग्रन्थ में आधुनिक काल के पहले स्त्री-रचनाकारों में सिर्फ एक कवयित्री मीरा का नाम दर्ज हुआ है।"[5] इससे यह जान पड़ता है कि साहित्येतिहास में स्त्री लेखिकाएँ मौजूद रहीं है किन्तु उन्हें हाशिये पर रखा गया।

आगे चलकर आधुनिक काल में स्त्री की लेखनी को प्रकाश में लाने की कोशिशे हुई है खुद स्त्री लेखिकाएँ अपने काम के प्रति जागरुक हो रहीं थीं। हालाँकि उन्नीसवीं सदी के सुधारवादी आन्दोलनों ने स्त्री के अन्दर अस्तित्व की चेतना जगाई ऐसा माना जा सकता है। इसके बावजूद स्त्रियों का कोई स्वतन्त्र आन्दोलन उन्नीसवीं सदी में उभरकर नहीं आया। बीसवीं सदी के प्रथम दशक को ही इसका श्रेय जाता है कि स्त्री जागृति की चेतना व्यापक रूप से उभरी। विख्यात आलोचक डॉ. वीर भारत तलवार के अनुसार-"1909ई. में इलाहबाद में पहली बार रामेश्वरी नेहरु ने प्रयाग महिला समिति का गठन किया और इसी के साथ एक गंभीर पत्रिका स्त्री-दर्पण निकालना शुरू किया। इस पत्रिका का एक अन्तरंग भाग कुमारी दर्पण नाम से छपता था, जिसकी संपादिका रूपकुमारी नेहरु थी। स्त्री-दर्पण हिंदी-प्रदेश में स्त्री-आन्दोलन की सबसे मुख्य पत्रिका बनी। स्त्रियों की समस्याओं को एक आन्दोलन कारी ढंग से, इतनी गंभीरता और गहराई से, उठाने वाली पत्रिका उस समय कोई दूसरी न थी। पहले विश्वयुद्ध के दौर में और उसके बाद हिंदी में किसान-साहित्य की ही तरह स्त्री-साहित्य की भी काफी रचना हुई। स्त्रियों के सवालों को उठाया गया, खुद स्त्रियों ने आगे बढ़कर अपनी समस्याओं पर बहस चलाई और साहित्य लिखा। पुरे हिंदी प्रदेश के स्तर पर तो नहीं, पर स्थानीय स्तर पर कुछ स्त्री-संगठन भी बने। स्त्रियों से सम्बंधित पत्र-पत्रिकाओं और साहित्य के प्रकाशन का सिलसिला शुरू हो गया।"[6]

द्विवेदी युग में स्त्री की स्थितियों पर लगातार विचार हुआ। "भारत में नवजागरण के दौर में स्त्रियों के अस्तित्व और व्यक्तित्व की रक्षा और विकास के व्यापक अभियान छेड़े गए। यदि उन वर्षों में बाल विवाह, सतीप्रथा, विधवा प्रताड़ना और अशिक्षा दूर करने के प्रयत्न न किए गए होते तो बीसवीं शताब्दी का अधिकांश साहित्य दूसरी तरह से

[5] हिंदी काव्य की कलामयी तारिकाएँ: व्यथित हृदय(स), भूमिका एवं प्रस्तुति गरिमा श्रीवास्तव, अनन्य प्रकाशना 2018, पृष्ठ 21

[6] वही पृष्ठ 10

लिखा गया होता।"[7] सुधारवादी आंदोलनों ने समाज में नवजागरण का जो बीज बोया वह द्विवेदी युग में आते-आते और भी परिष्कृत हुआ। यह नवजागरण का द्वितीय चरण था। नवजागरण का प्रभाव हर तरफ दिखाई देने लगा था। समाज में शिक्षित होने के मायने समझे जा रहे थे तो ऐसे में स्त्रियाँ पीछे कैसे रहती। स्त्रियों का भी शिक्षित होना जरुरी समझा जाने लगा। स्त्री की शिक्षा के साथ उनकी चेतना का भी विकास हुआ। वह अब समझने लगी की उनका दायरा सिर्फ घर तक सीमित नहीं हैं वह आगे निकलकर पुरुष से कन्धा मिलाकर चल सकती है। बस उन्हें एक धक्के की आवश्यकता थी और वो धक्का नवजागरण ने उन्हें दिया। अब स्त्री को लगने लगा कि उसका अस्तित्व, स्थान, अधिकार और आज़ादी संकट में है, उसे अपने विचारों को अभिव्यकि देनी होगी। हालाँकि पहले उन्हें पारंपरिक रास्ते पर चलाया गया। शिक्षा के नाम पर उन्हें अच्छी और बुरी स्त्री का फर्क समझाया गया किन्तु इन सब के बावजूद वह चिकनी चुपड़ी बातों में ना आकर प्रतिरोध करती है। "यकायक उसने हड़ताल कर दी। उसे नहीं दौड़ना, रेल की तरह, पटरी पर। स्त्री-लेखन इसीलिए एक विस्फोट की तरह आरम्भ हुआ। स्त्री वर्तमाना समय और समाज के साथ अपने सम और विषम संबंधो को समझने की भरपूर कोशिश करती रही है।"[8] और यह सब हुआ उन्नीसवीं शती के अंत में इससे पहले स्त्री के अस्तित्व में ऐसा बदलाव नहीं आया था किन्तु मुक्ति और परिवर्तन की कामना स्त्री की चेतना में गहरे बैठी थी और उसी चेतना का विस्फोट द्विवेदी युग में आते-आते और बड़ा हो जाता है।

सही मायनों में स्त्रियों के वर्चस्व की स्थापना सन् 1900 के बाद से शुरू हुई। सन् 1905 में मुंशी देवीप्रसाद ने 'महिला मृदुवाणी' प्रकाशित की। इस तरह देखा जाए तो स्त्रियों का पहला संग्रह 1900 के बाद ही प्रकाश में आया। अब स्त्रियाँ खुलकर अपने भावों व विचारों को अभिव्यक्ति देने लगीं। द्विवेदी युग की ऐसी कई लेखिकाएँ जिन्होंने अपनी रचना क्षमता का परिचय दिया है। जैसे जुगलप्रिया, रामप्रिया, राजरानी देवी, बुन्देलबाला, कमलाबाई, बंग महिला आदि नाम उल्लेखनीय हैं। कुछ स्त्री रचनाकार कृष्ण भक्त हैं तो कुछ की कविताओं में मुख्य विषय सीता और राम हैं। कुछ स्त्री शिक्षा सम्बन्धी कविताएँ लिख रहीं हैं तो कुछ की कविताओं में समाज और राष्ट्र की प्रेम वेदना है तथा कई लेखिकाएँ विषय वैविध्य अपनाती हैं अतः इन स्त्री रचनाकारों पर शोध की आवश्यकता है।

स्त्री के लेखन के साथ ही स्त्री-विमर्श का समय भी आरम्भ हो जाता है। या ऐसा कहना सटीक होगा कि स्त्री लेखन स्त्री के लिए मुक्ति के प्रयासों का एक द्वार है, अनुभूति और अभिव्यक्ति का द्वार। यह समय पुनर्जागरण व सुधार का समय रहा। ऐसे में स्त्रियाँ अपने अधिकार समझ रहीं थीं। साहित्य में भी इन्होंने सक्रीय होकर अपनी भूमिका दर्ज कराना आरम्भ किया किन्तु "पुरुषों द्वारा लिखी अपनी कथा और गाथा स्त्री को अधुरा इतिहास लगती है। इसीलिए कभी मीरा के रूप में, कभी अज्ञात हिन्दू महिला के रूप में वह अपनी असमान स्थिति पर विचार करती है।"[9] इस कदम के लिए उन्हें समाज से खरी-खोटी भी सुन्नी पड़ी किन्तु स्त्रियों ने जोखिम उठाया वह डटी रही, लिखती रही और आगे बढती रही। उन्हें अभी प्रकाश में आना बाकी था वह अँधेरे में रहकर किख रहीं थीं, नकली नामों से लिख रहीं थीं।

---

[7] बीसवीं सदी का हिंदी महिला-लेखना खंड 3,सम्पादक-ममता कालिया, साहित्य अकादेमी, पृष्ठ 9
[8] वही, पृष्ठ 10
[9] वही, पृष्ठ 11

इसके सबसे प्रसिद्ध उदाहरण के रूप में 'राजेन्द्रबाला घोष' उर्फ़ 'बंग महिला' आती है। "वे बंग महिला, एक बंग महिला, कौनों बंग महिला, श्री बंग महिला आदि उपनामों से साहित्य सृजन करती रही थी।"[10] ऐसे ही बुन्देलबाला है। बुंदेलखंड से होने के कारण इनका नाम बुन्देलबाला पड़ गया जिनका असली नाम गुजराती बाई था किन्तु यह भी नकली नाम से लिखती थी।

इसके साथ ही इस काल की स्त्री लेखिकाओं में जुगलप्रिया, रामप्रिया, हेमंतकुमारी चौधरानी, राजमाता दियरा, रमा देवी, राजदेवी(सभद्राकुमारी चौहान की बड़ी बहन), गोपाल देवी, यशोदा देवी, प्रियंवदा देवी, सरस्वती देवी, कीरति देवी आदि के नाम सम्मलित किये जा सकते है।

कुछ स्त्री रचनाकार कृष्ण भक्त है तो कुछ की कविताओं के मुख्य विषय सीता और राम है। कुछ स्त्री शिक्षा संबंधी कविताएँ लिख रही हैं तो कुछ की कविताओं मं समाज और राष्ट्र की प्रेम वेदना है तथा कई लेखिकाएँ विषय वैविध्य अपनाती है अतः इन स्त्री रचनाकारों पर एक नज़र डाल लेना आवश्यक है। जुगल प्रिया श्री कृष्ण की उपासना करती थी। कृष्ण की भक्ति स्वरूप उन्होंने उनके सिद्धान्तों को अपने काव्य में गढ़ा।

"यह तन एक दिन होय जु छारा, नाम निशान न रहि हैं रचहु भूलि जाय गो सब संसारा, काल घरी पूरी जब है है लगे न छिन छाँडत भ्रम जारा, या मायानटिनी के बस में भूलि गाये सुख-सिन्ध् अपारा। जुगल प्रिया अजहुँ किन चेतन मिलि हैं प्रीतम प्यारा।" [11]

इसी तरह गिरिराज कुँवरि 1833 भी कृष्ण भक्त थी यह मीरा की कृष्ण भक्ति से प्रभावित थी इसीलिए बहुत कम समय में ही यह कृष्ण भक्ति करने लगी थी।

"पारब्रह्म परमात्मा, दीनबन्ध् प्रतिपाल।

नमो हाथ बै जोड़ कै, भजहुं सदा गोपाल।।"[12]

जहाँ जुगल प्रिया और गिरिराज कुँवरि कृष्ण भक्ति करती नज़र आती हैं वहीं राम प्रिया रघुराज कुँवरि राम भक्त थी। इन्होंने कृष्ण की धारा में न बह कर राम काव्य की सृष्टि की है। इन्होंने अपनी कविताओं मं सीता और राम की अंग-छवि को चमतकृत उपमाओं के रूप मं प्रकट किया।

भारतीय नवजागरण का यह समय, जब हर जगह जागृति हो रही थी लोग अपने अधिकारों को समझने लगे थे वहीं इस युग की लेखिकाओं ने भी देश भक्ति व राष्ट्र को जागृत करने का मार्ग चुना। जिनमें से एक हैं बुंदेलबाला। इनकी राष्ट्र भक्ति का अंदाज कुछ अलग ही है वह माता और पुत्र के संवादों द्वारा अपनी राष्ट्र भावना को कुछ इस तरह प्रकट करती है-

[10] वही, पृष्ठ 12
[11] व्यथित हृदय, हिंदी काव्य की कलामयी, तारिकाएँ, पृष्ठ-63
[12] नीरजा माधव, हिंदी साहित्य का ओझल नारी इतिहास, पृष्ठ-81

"माता- हे प्यारे, कदापि तू इसको तुच्छ श्याम रेखा मत मान।

यह है शैल हिमाचल इसको भारत-भूमि, पिता पहचान।

नेह सहित ज्यों पितु-पुत्री को सादर पालन करता है।

यह हिम-गिरि त्यों ही भारत-हित पितृ-भाव हिय ध्रता है।

पुत्र- यह जो बाम और नक्शे के रेखामय अतिशय अभिराम

शोभामय सुंदर प्रदेश है, मुझे बता दे उसका ना।।

माता- बेटा यह पंजाब देश है, पुण्य-भूमि सुख-शांति-निवास।

सर्वप्रथम इस थल पर आकर किया, आरियो ने निज वास।

इस देश मं बसके 'पोरस' ने रखा है भारत-मान।

जब सम्राट सिकंदर आकर किया चाहता था अपमान।।"[13]

भूषण की तुलना बुँदेलबाल से करते हुए अपनी पुस्तक 'स्त्री कवि कौमुदी' की भूमिका में रमाशंकर शुक्ल 'रसाल' ने कहा है कि "बुंदेलबालाजी की इन्हीं विशेषताओं के कारण साहित्य में हम अच्छा स्थान स्वीकार करते हैं। समाज में इन्हें वही स्थान दिया जा सकता है, जो पुरुष कवि-समाज में भूषण जैसे कवियों को दिया गया है।" [14] एक स्त्री लेखिका द्वारा उस समय पर राष्ट्र भक्ति की भावना को इतनी प्रबलता से दिखाना अपने आप में बड़ी बात है। जिस समाज में स्त्रियों को पति भक्ति या ईश्वर की भक्ति से आगे सोचने नहीं दिया जाता था वहीं बुँदेलबाला जैसी स्त्री लेखिका ने अपनी राष्ट्रीय भक्ति द्वारा देश को जागृत करने का कार्य किया।

इसी तरह बच्चों में देश भक्ति की भावना जगाने के लिए गोपाल देवी ने भरपूर प्रयास किया। इन्होंने बाल्य साहित्य लिखा बच्चों के लिए काव्यात्मक कहानियाँ रची। आने वाली पीढ़ी में देश भक्ति की भावना का उदय हो, इसका उन्हें ख्याल था। उदाहरण के लिए 'चमगादड़' के माध्यम से देशभक्ति और राज भक्ति, दोनों में अपनी निष्ठा रखने वालों को वे फटकारते हुए कहती है-

"समय पड़े जो दोनों दल की करते है, हाँ जी, हाँ जी।'

वे चमगादड़ के समान दोनों की सहते नाराजी।"

कविता के साथ-साथ उस समय की स्त्रियों ने गद्य भी लिखा है। द्विवेदी युग में पद्य की भाषा खड़ी बोली हो गई तथा इस युग का गद्य खड़ी बोली में तो था किन्तु भारतेन्दु युग के गद्य से ज्यादा परिष्कृत था। चूँकि भारतेन्दु युग में गद्य की शुरूआत हुई उसी का अगला चरण द्विवेदी युग था जिसमें गद्य और भी निखर के सामने आया। अतः इस काल में न सिर्फ पुरुष रचनाकार गद्य लिख रहे थे बल्कि स्त्रियाँ भी गद्य में रचनाएँ कर रही थी। प्रियंवदा देवी, कमला बाई किबे, बंग महिला आदि ऐसी ही स्त्री लेखिकाएँ है जिन्होंने गद्य रचना की। बंग महिला की कहानी 'दुलाई वाली' 1907 प्रथम

[13] □□□ □□□□□-82

[14] □□□ □□□ □□□□, □□□□□-82

कहाँनियों में गिनी जाती है। इसका कुछ अंश इस प्रकार है। "तुम आज कहती हो! हमें तो अभी जाना है। बात यह है कि आज ही नवलकिशोर कलकत्ते से आ रहे है। आगरे से अपनी नई बहू को भी साथ ला रहे हैं । सों उन्होंने हमें आज ही जाने के लिए इसरार किया है। हम सब लोग मुगलसराय से साथ ही इलाहाबाद चलेंगे। उनका तार मुझे घर से निकलते ही मिला । इसी से मैं झट नही धेकर लौट आया। .....उसकी हँसी मुझे नही भाती। एक रोज मैं चैके में बैठी पूड़ियाँ काढ रही थी कि इतने में न जाने कहाँ से आकर नवल चिल्लाने लगे , 'ऐ बुआ ! ऐ बुआ ! देखो तुम्हारी बहू पूड़ियाँ खा रही है।' मैं तो मारे सरम के मर सी गई।" [15] अतः यह कहा जा सकता है कि 1900 से 1920 का समय हिन्दी साहित्य जगत का यह आधुनिक काल है तथा यह स्त्री लेखन का भी आधुनिक काल माना जा सकता है। सदियों से कोशिश करती आ रही स्त्रियों ने इस काल तक आते-आते अपने लेखन को और भी परिष्कृत किया तथा हिन्दी नवजागरण में अपनी भूमिका दर्ज की।

यह अंत नही है और भी नाम इसमें जुड़ेंगे बस इन्हें प्रकाश में आने की देर है। अतः यह कहा जा सकता है कि 1900 से 1920 का समय हिंदी साहित्य जगत का यह आधुनिक काल है तथा इसे स्त्री लेखन का भी आधुनिक काल माना जा सकता है। सदियों से कोशिश करती आ रही स्त्रियों ने इस काल तक आते-आते अपने लेखन को और भी परिष्कृत किया तथा हिंदी नवजागरण में अपनी भूमिका दर्ज की।

सहायक ग्रन्थ

1 बच्चन सिंह, आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद,2016

2 प्रभा खेतान, स्त्री: उपेक्षिता, सीमोन द बोऊवार, हिंदी पाकेट बुक्स, दिल्ली, 1992

3 महावीर प्रसाद द्विवेदी, स्त्री शिक्षा के विरोधी तर्कों का खंडन, कृष्णकुमारी (सम्पादक) महिला मोद, गंगा पुस्तक माला, लखनऊ,1925

4 रामविलास शर्मा, भारतेंदु हरिश्चंद्र और हिंदी नवजागरण की समस्याएँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,1953

5 रामविलास शर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण, राजकमल प्रकाशन, चौथा संस्करण -2021

6 राधा कुमार, स्त्री संघर्ष का इतिहास 1800-1900 , सारांश प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 1999

7 सुमन राजे, हिंदी साहित्य का आधा इतिहास, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2004

[15] hindisamay,com {online}